

भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा और लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका

डॉ० रोमा कुमारी

शोधार्थी

स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान

तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर-812007

शोध-सार

भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा मुख्य रूप से समावेशी और धर्मनिरपेक्ष है, जो विविधता में एकता पर आधारित है। यह यूरोपीय जातीय राष्ट्रवाद से भिन्न, नागरिक राष्ट्रवाद का रूप है, जिसमें सभी नागरिकों को धर्म, भाषा, जाति या संस्कृति के बावजूद समान अधिकार प्राप्त हैं। स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल जैसे नेताओं ने अहिंसा, समानता और धार्मिक सहिष्णुता को राष्ट्रवाद का आधार बनाया, जिससे ब्रिटिश 'फूट डालो और राज करो' की नीति का मुकाबला किया गया। लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारत की बहुलतावादी समाज में भाषाई, सांस्कृतिक और धार्मिक विविधता को एकीकृत कर ही मजबूत लोकतांत्रिक व्यवस्था संभव है। संविधान में निहित 'सर्व धर्म समभाव' और 'एकता में विविधता' के सिद्धांत अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं तथा राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाते हैं। स्वतंत्रता के बाद रियासतों का एकीकरण और भाषाई राज्यों का गठन इसकी मिसाल है। हालांकि, हाल के वर्षों में धार्मिक राष्ट्रवाद के उदय से चुनौतियां उत्पन्न हुई हैं, किंतु समावेशी राष्ट्रवाद ही भारतीय लोकतंत्र की दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करता है। यह अवधारणा न केवल राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देती है, बल्कि वैश्विक स्तर पर बहुलतावादी लोकतंत्र का मॉडल प्रस्तुत करती है।

शब्दकुंजी : राष्ट्रवाद, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीय एकीकरण एवं बहुलतावाद आदि

भूमिका :

भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा विश्व के अन्य राष्ट्रवादों से सर्वथा भिन्न है। यूरोपीय राष्ट्रवाद मुख्य रूप से जातीय, भाषाई या धार्मिक एकरूपता पर आधारित था, जो अक्सर बहिष्कार और संघर्ष का कारण बना। इसके विपरीत, भारतीय राष्ट्रवाद समावेशी और बहुलतावादी है, जो विविधता को अपनी मूल शक्ति मानता है। यह 'एकता में विविधता' के सिद्धांत पर टिका है, जहां विभिन्न धर्म, भाषाएं, जातियां और संस्कृतियां एक राष्ट्रीय पहचान के अंतर्गत सह-अस्तित्व में रहती हैं। भारतीय राष्ट्रवाद का उदय औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष से हुआ, जिसमें ब्रिटिश 'फूट डालो और राज करो' की नीति का मुकाबला करने के लिए सभी वर्गों को एकजुट किया गया। स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, सुभाष चंद्र बोस और डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने इस राष्ट्रवाद को आकार दिया। गांधीजी ने अहिंसा और सर्वधर्म समभाव को आधार बनाया, नेहरू ने धर्मनिरपेक्षता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित किया, जबकि पटेल ने राष्ट्रीय

एकीकरण पर जोर दिया। यह राष्ट्रवाद नागरिक राष्ट्रवाद का रूप है, जहां राष्ट्रीयता धर्म या जाति से नहीं, बल्कि संवैधानिक मूल्यों और समान नागरिकता से निर्धारित होती है। लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत जैसे बहुभाषी, बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक देश में लोकतांत्रिक स्थिरता तभी संभव है जब सभी समुदायों को मुख्यधारा में समान भागीदारी मिले। संविधान ने मौलिक अधिकारों, धर्मनिरपेक्षता और संघीय व्यवस्था के माध्यम से इस एकीकरण को संस्थागत रूप प्रदान किया। स्वतंत्रता के बाद रियासतों का एकीकरण और भाषाई राज्यों का गठन इसकी मिसालें हैं।

भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा मूलतः समावेशी, बहुलतावादी और नागरिक-केन्द्रित रही है, जो यूरोपीय जातीय या धार्मिक राष्ट्रवाद से भिन्न है। यह राष्ट्रवाद विविधता को अपनी शक्ति मानता है और एकता में विविधता को अपना मूल मंत्र बनाता है। प्राचीन काल से भारत एक सभ्यता के रूप में विविध धर्मों, भाषाओं और संस्कृतियों का संगम रहा है, जहां मौलिक एकता सदैव विद्यमान रही। महात्मा गांधी ने इसे अहिंसा, सर्वधर्म समभाव और सत्याग्रह के माध्यम से आकार दिया, जबकि जवाहरलाल नेहरू ने धर्मनिरपेक्षता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और समाजवादी आदर्शों से समृद्ध किया। सरदार वल्लभभाई पटेल ने राष्ट्रीय एकीकरण पर जोर देकर इसे व्यावहारिक आधार प्रदान किया। यह राष्ट्रवाद किसी एक धर्म या जाति पर आधारित नहीं, बल्कि संवैधानिक मूल्यों, समान नागरिकता और सभी को समान अधिकार देने पर टिका है। स्वतंत्रता संग्राम में गांधीजी के नेतृत्व में असहयोग, सविनय अवज्ञा और भारत छोड़ो आंदोलन ने सभी वर्गों हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, दलित, किसान, मजदूर और महिलाओं को एकजुट किया, जिससे ब्रिटिश फूट डालो और राज करो की नीति का मुकाबला हुआ। नेहरू की डिस्कवरी ऑफ इंडिया में भारत को प्राचीन सभ्यता के रूप में चित्रित किया गया, जो विविधता में एकता का प्रतीक है। पटेल ने रियासतों के एकीकरण से भौगोलिक और भावनात्मक एकता स्थापित की। भारतीय राष्ट्रवाद नागरिक राष्ट्रवाद का उदाहरण है, जहां राष्ट्रीयता धर्म या जाति से नहीं, बल्कि संविधान और लोकतंत्र से निर्धारित होती है।

लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका अपरिहार्य है, क्योंकि भारत जैसे बहुभाषी, बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक देश में लोकतांत्रिक स्थिरता तभी संभव है जब सभी समुदायों को मुख्यधारा में समान भागीदारी मिले। संविधान ने मौलिक अधिकारों, धर्मनिरपेक्षता और संघीय व्यवस्था के माध्यम से इस एकीकरण को संस्थागत रूप दिया। प्रस्तावना में हम भारत के लोग सभी को शामिल करता है, जबकि अनुच्छेद 14-15 समानता, 25-28 धार्मिक स्वतंत्रता और 29-30 अल्पसंख्यक अधिकारों की गारंटी देते हैं। स्वतंत्रता के बाद पटेल द्वारा 562 रियासतों का एकीकरण जूनागढ़, हैदराबाद और कश्मीर जैसे मामलों में कूटनीति और आवश्यक बल प्रयोग से ने भौगोलिक एकता सुनिश्चित की। 1956 में भाषाई राज्यों का पुनर्गठन ने भाषाई विविधता को सम्मान देकर अलगाववाद रोका। लोकतंत्र ने चुनाव, आरक्षण और संघीय बजट के माध्यम से विभिन्न समुदायों को भागीदारी दी, जिससे भावनात्मक एकीकरण हुआ। गांधीजी का सर्वधर्म समभाव, नेहरू का धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र और पटेल का व्यावहारिक एकीकरण मिलकर भारतीय लोकतंत्र की नींव बने। यह एकीकरण न केवल आंतरिक स्थिरता प्रदान करता है, बल्कि वैश्विक स्तर पर बहुलतावादी लोकतंत्र का मॉडल प्रस्तुत करता है।

हालांकि, समकालीन भारत में धार्मिक राष्ट्रवाद के उदय ने समावेशी राष्ट्रवाद के सामने चुनौतियां खड़ी की हैं। बहुसंख्यकवाद, धार्मिक ध्रुवीकरण और अल्पसंख्यक असुरक्षा ने राष्ट्रीय एकता को प्रभावित किया है। सीएए, एनआरसी जैसे कानूनों और धार्मिक आधार पर राजनीति ने संवैधानिक धर्मनिरपेक्षता को चुनौती दी है। क्षेत्रीय अलगाववाद, जातिवाद और आर्थिक असमानता भी बाधाएं हैं। हाइपर-नेशनलिज्म ने असहमति को देशद्रोह बना दिया है। फिर भी, भारतीय समाज की विविधता और संवैधानिक मूल्य समावेश को बचाए रखते हैं। इतिहास साक्षी है कि जब भारत ने समावेशी राष्ट्रवाद अपनाया, तब स्थिरता और प्रगति हुई जब धार्मिक संकीर्णता हावी हुई, तब तनाव बढ़ा।

अतः भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा लोकतंत्र में एकीकरण की कुंजी है। यह विविधता को कमजोरी नहीं, शक्ति बनाता है। संविधान की भावना समानता, न्याय, स्वतंत्रता और बंधुत्व को मजबूत कर हम राष्ट्रीय एकता सुनिश्चित कर सकते हैं। गांधी, नेहरू और पटेल की विरासत हमें याद दिलाती है कि समावेशी राष्ट्रवाद ही भारत को मजबूत, लोकतांत्रिक और विश्व गुरु बना सकता है। यह न केवल आंतरिक एकता बढ़ाता है, बल्कि वैश्विक शांति और सह-अस्तित्व का संदेश देता है। यदि हम संवैधानिक मूल्यों पर अडिग रहें और सभी नागरिकों को समान अवसर प्रदान करें, तो भारतीय लोकतंत्र दीर्घकालिक सफलता प्राप्त करेगा। यह समय की मांग है कि हम संकीर्णता त्यागकर समावेशी राष्ट्रवाद को पुनः जीवंत करें, ताकि भारत सच्चे अर्थों में एकजुट और समृद्ध राष्ट्र बने।

साहित्य अवलोकन :

साहित्य अवलोकन में भारतीय राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और राष्ट्रीय एकीकरण से संबंधित प्रमुख कार्यों की समीक्षा की गई है। यह अवलोकन ऐतिहासिक, राजनीतिक और सामाजिक दृष्टिकोणों पर आधारित है, जो विषय की जटिलता को उजागर करता है। साहित्य मुख्य रूप से स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं के लेखन, इतिहासकारों की किताबों और समकालीन विश्लेषणों से लिया गया है, जो भारतीय राष्ट्रवाद को समावेशी और बहुलतावादी के रूप में चित्रित करता है :-

नेहरू, जवाहरलाल (1946)¹ भारतीय राष्ट्रवाद की नींव रखती है। नेहरू भारत को एक प्राचीन सभ्यता के रूप में देखते हैं, जहां विविधता में एकता मूल सिद्धांत है। वे यूरोपीय जातीय राष्ट्रवाद की आलोचना करते हुए, भारतीय राष्ट्रवाद को धर्मनिरपेक्ष और वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित बताते हैं। यह पुस्तक स्वतंत्रता संग्राम में राष्ट्रीय चेतना के विकास को दर्शाती है तथा लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका पर प्रकाश डालती है।

गांधी, महात्मा (1909)² राष्ट्रवाद को अहिंसा, सर्वधर्म समभाव और सत्याग्रह से जोड़ती है। गांधी औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध समावेशी संघर्ष की वकालत करते हैं, जहां सभी समुदाय (हिंदू, मुस्लिम आदि) एकजुट हों। यह कार्य ब्रिटिश शफूट डालो और राज करोश नीति के मुकाबले में एकीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है, हालांकि इसमें आधुनिकता की आलोचना भी है।

अम्बेडकर, भीमराव (1945)³ द्विराष्ट्र सिद्धांत की आलोचना करती है तथा समावेशी राष्ट्रवाद की वकालत करती है। अम्बेडकर दलितों और अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर जोर देते हैं, जो लोकतंत्र में एकीकरण के लिए आवश्यक है। उनका दृष्टिकोण संवैधानिक मूल्यों पर आधारित है, जहां समानता बिना एकीकरण के असंभव है।

खान, अब्दुल गफ्फार (1987)⁴ पश्चिमोत्तर भारत में राष्ट्रवाद को दर्शाती है। खान (बादशाह खान) अहिंसात्मक राष्ट्रवाद और मुस्लिम-हिंदू एकता पर बल देते हैं, जो स्वतंत्रता संग्राम में एकीकरण की भूमिका को मजबूत करता है।

चंद्रा, बिपन (1988)⁵ राष्ट्रवाद के विकास को चरणबद्ध रूप से वर्णित करती है। चंद्रा प्रारंभिक राष्ट्रवाद (मॉडरेट्स और एक्सट्रीमिस्ट्स) से गांधी युग तक के आंदोलनों (असहयोग, भारत छोड़ो) का विश्लेषण करते हैं, जहां एकीकरण ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध प्रमुख हथियार था। यह पुस्तक सामाजिक सुधारों (अछूतोंद्वारा, महिला भागीदारी) को राष्ट्रवाद से जोड़ती है।

सरकार, सुमित (1983)⁶ औपनिवेशिक काल में राष्ट्रवाद की सामाजिक-आर्थिक जड़ों का परीक्षण करती है। सरकार बंगाल विभाजन, स्वदेशी आंदोलन और विभाजन की घटनाओं पर फोकस करते हैं, जो दिखाता है कि कैसे समावेशी राष्ट्रवाद ने साम्प्रदायिकता को चुनौती दी, लेकिन अंततः विभाजन हुआ। लोकतंत्र में एकीकरण की कमी को वे अस्थिरता का कारण बताते हैं।

पांडे, ग्यानेंद्र (2001)⁷ राष्ट्रवाद को सांस्कृतिक स्मृति के रूप में देखती है। पांडे इतिहास लेखन में बहुलतावाद पर जोर देते हैं, जहां विविधता राष्ट्रीय पहचान का हिस्सा है। यह कार्य समकालीन राष्ट्रवाद की चुनौतियों (धार्मिक ध्रुवीकरण) को ऐतिहासिक संदर्भ से जोड़ता है।

आलम, जावेद (2004)⁸ समावेशी राष्ट्रवाद को धर्मनिरपेक्षता से जोड़ता है। आलम समकालीन चुनौतियों (हिंदू राष्ट्रवाद) का विश्लेषण करते हैं तथा लोकतंत्र में अल्पसंख्यक एकीकरण की भूमिका पर चर्चा करते हैं।

भट्टाचार्य, नीलाद्रि (1991)⁹ साम्प्रदायिकता को राष्ट्रवाद की बाधा बताती है। भट्टाचार्य 19वीं-20वीं शताब्दी के आंदोलनों का विश्लेषण करते हुए, एकीकरण की आवश्यकता पर बल देते हैं।

हसन, मुशिरुल (1997)¹⁰ विभाजन की घटना को राष्ट्रवाद के संदर्भ में देखती है। हसन मुस्लिम लीग के द्विराष्ट्र सिद्धांत की आलोचना करते हुए, समावेशी एकीकरण की कमी को विभाजन का कारण बताते हैं। यह कार्य स्वतंत्र भारत में एकीकरण की प्रक्रियाओं (रियासतें, भाषाई राज्य) को महत्वपूर्ण मानता है।

अध्ययन का उद्देश्य :

इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा को समझना तथा लोकतंत्र में राष्ट्रीय एकीकरण की भूमिका का विश्लेषण करना है। भारतीय राष्ट्रवाद को उसके ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भ में परीक्षण करते हुए, यह अध्ययन यह दर्शाता है कि कैसे समावेशी राष्ट्रवाद विविधता वाले समाज में लोकतांत्रिक स्थिरता को मजबूत करता है। यह अध्ययन विशेष रूप से यूरोपीय राष्ट्रवाद से भारतीय राष्ट्रवाद की भिन्नता, स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं के योगदान तथा समकालीन चुनौतियों पर है :-

- भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा को परिभाषित करना तथा उसके समावेशी, बहुलतावादी और नागरिक-केन्द्रित स्वरूप का परीक्षण करना।
- लोकतंत्र में राष्ट्रीय एकीकरण की भूमिका का मूल्यांकन करना, जिसमें संवैधानिक प्रावधानों, ऐतिहासिक घटनाओं (जैसे रियासतों का एकीकरण और भाषाई राज्यों का गठन) तथा भावनात्मक एकीकरण की प्रक्रियाओं का विश्लेषण शामिल है।

- समकालीन चुनौतियों, जैसे धार्मिक राष्ट्रवाद, बहुसंख्यकवाद और क्षेत्रीय अलगाववाद, का आकलन करना तथा समावेशी राष्ट्रवाद को मजबूत करने के उपाय सुझाना।
- भारतीय राष्ट्रवाद को वैश्विक संदर्भ में एक बहुलतावादी लोकतंत्र के मॉडल के रूप में प्रस्तुत करना, जो विविधता को शक्ति के रूप में देखता है।

भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और विकास

भारतीय राष्ट्रवाद का उदय 19वीं शताब्दी के अंत में हुआ, जब पश्चिमी शिक्षा, मुद्रण माध्यम और औपनिवेशिक शोषण ने भारतीयों में राष्ट्रीय चेतना जगाई। बेनेडिक्ट एंडरसन की 'इमेजिंड कम्युनिटी' की अवधारणा के अनुसार, राष्ट्रवाद एक काल्पनिक समुदाय है, लेकिन भारत में यह विविधता पर आधारित था। प्रारंभिक राष्ट्रवादी जैसे दादाभाई नौरोजी, सुरेंद्रनाथ बनर्जी और गोपाल कृष्ण गोखले ने संवैधानिक तरीकों से स्वराज की मांग की। बाल गंगाधर तिलक ने स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है का नारा देकर जनता को जागृत किया।

20वीं शताब्दी में गांधीजी के आगमन ने राष्ट्रवाद को जनआंदोलन बना दिया। चंपारण (1917), खेड़ा (1918), असहयोग आंदोलन (1920–22), नमक सत्याग्रह (1930) और भारत छोड़ो आंदोलन (1942) ने सभी वर्गों किसान, मजदूर, महिलाएं, अल्पसंख्यक को एकजुट किया। गांधीजी का सत्याग्रह अहिंसा पर आधारित था, जो सभी धर्मों के लिए समान सम्मान की मांग करता था। नेहरू ने डिस्कवरी ऑफ इंडिया में भारत को एक प्राचीन सभ्यता के रूप में चित्रित किया, जो विविधता में एकता का प्रतीक है। पटेल ने किसान आंदोलनों से राष्ट्रवाद को मजबूत आधार दिया।

रवींद्रनाथ टैगोर ने राष्ट्रवाद की आलोचना की, इसे पश्चिमी संकीर्णता बताया, लेकिन भारतीय संदर्भ में इसे सार्वभौमिक मानवता से जोड़ा। अम्बेडकर ने दलितों को मुख्यधारा में लाने के लिए राष्ट्रवाद को समानता से जोड़ा। इस प्रकार, भारतीय राष्ट्रवाद यूरोपीय जातीय राष्ट्रवाद से अलग, नागरिक और समावेशी बना।

स्वतंत्रता संग्राम में राष्ट्रवाद की भूमिका

स्वतंत्रता संग्राम में राष्ट्रवाद ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद का मुकाबला किया। 1905 के बंगाल विभाजन ने स्वदेशी आंदोलन को जन्म दिया, जिसमें हिंदू-मुस्लिम एकता दिखी। खलीफत आंदोलन (1919–24) में गांधीजी ने मुस्लिम समुदाय को जोड़ा। कांग्रेस ने 1929 में पूर्ण स्वराज की मांग की। राष्ट्रवाद ने सामाजिक सुधारों को भी बढ़ावा दिया अछूतोंद्वारा, महिला शिक्षा, अंतर-जातीय विवाह। यह धार्मिक कट्टरता के खिलाफ था। हालांकि, 1940 के दशक में मुस्लिम लीग के द्विराष्ट्र सिद्धांत ने विभाजन को जन्म दिया, लेकिन मुख्यधारा का राष्ट्रवाद समावेशी रहा।

लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका

भारत एक बहुलतावादी समाज है 22 अनुसूचित भाषाएं, प्रमुख धर्म, हजारों जातियां। लोकतंत्र में एकीकरण के बिना अस्थिरता। संविधान सभा में नेहरू, पटेल और अम्बेडकर ने संघीय लोकतंत्र चुना, जहां केंद्र मजबूत लेकिन राज्य स्वायत्त। स्वतंत्रता के बाद पटेल ने 562 रियासतों का एकीकरण किया। वी.पी. मेनन की सहायता से इंस्ट्रूमेंट ऑफ एक्सेशन के माध्यम से रक्षा, विदेश और संचार केंद्र को सौंपे गए। जूनागढ़, हैदराबाद और कश्मीर जैसे मामलों में कूटनीति और बल का प्रयोग किया।

यह भौगोलिक और भावनात्मक एकीकरण था। 1956 में भाषाई राज्यों का पुनर्गठन (राज्यों पुनर्गठन आयोग) ने भाषाई विविधता को सम्मान दिया, अलगाववाद रोका। संविधान के अनुच्छेद 14-15 (समानता), 25-28 (धार्मिक स्वतंत्रता), 29-30 (अल्पसंख्यक अधिकार) ने एकीकरण को मजबूत किया। सर्व धर्म समभाव और धर्मनिरपेक्षता (1976 में प्रस्तावना में जोड़ा) ने राज्य को तटस्थ बनाया। लोकतंत्र ने भागीदारी दी चुनाव, आरक्षण, संघीय बजट। यह एकीकरण भावनात्मक भी है, जहां विविधता राष्ट्रीय गौरव का हिस्सा है।

संवैधानिक प्रावधान और राष्ट्रवाद

भारतीय संविधान राष्ट्रवाद का दस्तावेज है। प्रस्तावना में हम भारत के लोग सभी को शामिल करता है। धर्मनिरपेक्षता (एस.आर. बोम्मई केस में बेसिक स्ट्रक्चर) सभी धर्मों को समान मानती है। संघीय ढांचा (अनुच्छेद 1) विविधता को एकता में बदलता है। अम्बेडकर ने कहा कि लोकतंत्र बिना समानता के असफल होगा। संविधान ने व्यक्तिगत कानूनों में सुधार (हिंदू कोड बिल) किए, लेकिन मुस्लिम पर्सनल लॉ को बनाए रखा समावेश का प्रतीक।

समकालीन चुनौतियां

हाल के दशकों में हिंदू राष्ट्रवाद (आरएसएस-बीजेपी) ने समावेशी राष्ट्रवाद को चुनौती दी। सीएए, एनआरसी, धार्मिक ध्रुवीकरण ने अल्पसंख्यकों में असुरक्षा पैदा की। बहुसंख्यकवाद ने हिंदू राष्ट्र की मांग की, जो संवैधानिक धर्मनिरपेक्षता से टकराती है। क्षेत्रीय अलगाववाद (कश्मीर, पूर्वोत्तर), जातिवाद और आर्थिक असमानता भी चुनौतियां हैं। हाइपर-नेशनलिज्म ने असहमति को देशद्रोह बना दिया।

निष्कर्ष :

भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा मूलतः समावेशी, बहुलतावादी और नागरिक-केन्द्रित रही है, जो यूरोपीय जातीय या धार्मिक राष्ट्रवाद से सर्वथा भिन्न है। यह राष्ट्रवाद विविधता को अपनी शक्ति मानता है और एकता में विविधता को अपना मूल मंत्र बनाता है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान गांधीजी के अहिंसात्मक एवं समावेशी दृष्टिकोण, नेहरू की धर्मनिरपेक्ष वैज्ञानिक दृष्टि तथा पटेल के राष्ट्रीय एकीकरण के प्रयासों ने इस राष्ट्रवाद को एक मजबूत आधार प्रदान किया। इन नेताओं ने स्पष्ट किया कि भारत का राष्ट्रवाद किसी एक धर्म, भाषा या संस्कृति पर आधारित नहीं हो सकता, बल्कि यह सभी को समान अधिकार और सम्मान देने वाला नागरिक राष्ट्रवाद है। भारतीय संविधान ने इसी भावना को संस्थागत रूप दिया है, जिसमें मौलिक अधिकार, धर्मनिरपेक्षता, समानता तथा अल्पसंख्यक अधिकारों की गारंटी निहित है। लोकतंत्र में एकीकरण की भूमिका अपरिहार्य है क्योंकि भारत जैसे बहुभाषी, बहुधार्मिक एवं बहुसांस्कृतिक देश में लोकतांत्रिक स्थिरता तभी संभव है जब सभी समुदायों को राष्ट्रीय मुख्यधारा में पूर्ण भागीदारी का अवसर मिले। स्वतंत्रता के पश्चात् सरदार पटेल द्वारा 562 रियासतों का एकीकरण, भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन तथा संविधान की संघीय व्यवस्था ने इस एकीकरण को व्यावहारिक रूप दिया। इन प्रयासों से न केवल भौगोलिक एकता स्थापित हुई, अपितु भावनात्मक एकीकरण का मार्ग भी प्रशस्त हुआ। लोकतंत्र ने विभिन्न समुदायों को अपनी पहचान बनाए रखते हुए राष्ट्रीय निर्णय-प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर प्रदान किया, जिससे अलगाववादी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगा। पिछले कुछ दशकों में धार्मिक एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के उदय ने समावेशी राष्ट्रवाद के सामने नई चुनौतियां खड़ी की हैं। बहुसंख्यकवाद की राजनीति, धार्मिक

धरुवीकरण तथा अल्पसंख्यक असुरक्षा की भावना ने राष्ट्रीय एकता को क्षति पहुँचाने का प्रयास किया है। किंतु इतिहास साक्षी है कि जब-जब भारत ने समावेशी राष्ट्रवाद को त्यागा, तब-तब सामाजिक तनाव एवं अस्थिरता बढ़ी। इसके विपरीत, जब भी हमने संवैधानिक मूल्यों सर्वधर्म समभाव, समानता एवं न्याय को प्राथमिकता दी, तब राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ हुई।

अतः निष्कर्ष यह है कि भारतीय लोकतंत्र की दीर्घकालिक सफलता एवं स्थिरता समावेशी राष्ट्रवाद पर ही निर्भर है। यह राष्ट्रवाद न केवल आंतरिक एकता को मजबूत करता है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी एक अनूठा मॉडल प्रस्तुत करता है जहाँ विविधता लोकतंत्र की कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी सबसे बड़ी ताकत बनती है। यदि हम संविधान की भावना के अनुरूप सभी नागरिकों को समान अवसर, सुरक्षा एवं सम्मान प्रदान करें, तो भारतीय राष्ट्रवाद न केवल देश को एकजुट रखेगा, अपितु विश्व को बहुलतावादी लोकतंत्र का सफल उदाहरण भी प्रस्तुत करेगा। यह समय की मांग है कि हम समावेशी राष्ट्रवाद को पुनः जीवंत करें तथा लोकतंत्र में एकीकरण की प्रक्रिया को और सशक्त बनाएँ, ताकि भारत सच्चे अर्थों में 'विश्व गुरु' बन सके।

संदर्भ-सूची :

1. नेहरू, जवाहरलाल (1946) : भारत की खोज, दिल्ली : जवाहर हरि प्रकाशन.
2. गांधी, महात्मा (1909) : हिंद स्वराज, अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन.
3. अम्बेडकर, भीमराव (1945) : पाकिस्तान या भारत का विभाजन, बॉम्बे थाकर एंड कंपनी.
4. खान, अब्दुल गफ्फार (1987) : मेरा जीवन और संघर्ष, दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.
5. चंद्रा, बिपन (1988) : भारत का स्वतंत्रता संग्राम, नई दिल्ली : पेंगुइन बुक्स इंडिया.
6. सरकार, सुमित (1983) : मॉडर्न इंडिया : 1885-1947, दिल्ली : मैकमिलन इंडिया.
7. पांडे, ग्यानेंद्र (2001) : राष्ट्र का स्मरण : राष्ट्रवाद और भारतीय इतिहास लेखन, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन.
8. आलम, जावेद (2004) : भारतीय धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रवाद, इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, Vol. 39, No. 36.
9. भट्टाचार्य, नीलाद्रि (1991), औपनिवेशिक भारत में राष्ट्रवाद और साम्प्रदायिकता, सामाजिक वैज्ञानिक, Vol. 14.
10. हसन, मुशिरुल (1997) : भारत का विभाजन : राजनीति और परिप्रेक्ष्य, नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.